

दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

निर्णय सुरक्षित : 11.07.2024

निर्णय उद्घोषित : 26.07.2024

रि.या.(सि) 3351/2017

नौ निहाल सिंह राणा

.....याचिकाकर्ता

द्वारा : श्री ए.के. बेहेरा, वरिष्ठ अधिवक्ता
सह श्री ए.के. त्रिवेदी, श्री ध्रुव
कोठारी व श्री ए.पी. सिंह,
अधिवक्तागण।

बनाम

भारत संघ व अन्य

.....प्रत्यर्थीगण

द्वारा : श्री जसविंदर सिंह व सुश्री शिप्रा
शुक्ला, अधिवक्तागण।

कोरम:

माननीय न्यायमूर्ति श्री सुरेश कुमार कैत

माननीय न्यायमूर्ति श्री गिरीश कठपालिया

निर्णय

न्या. गिरीश कठपालिया,

1. भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के तहत लाई गई इस

रिट याचिका द्वारा, याचिकाकर्ता ने मूल आवेदन सं. 653/2015 में केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण, प्रधान पीठ, नई दिल्ली द्वारा पारित दिनांक 02.09.2016 के आदेश को रद्द करने की मांग की है और ग्रेच्युटी, सभी सेवानिवृत्ति लाभों और छुट्टी नकदीकरण आदि पर ब्याज प्रदान करने की भी मांग की है। अग्रिम सूचना के आधार पर, प्रत्यर्थीगण ने अधिवक्ता द्वारा उपस्थिति दर्ज कराई।

1.1 अभिवचन पूरे होने के बाद, पूर्ववर्ती पीठ ने 14.11.2017 दिनांकित आदेश के माध्यम से नियम डी.बी. का निर्देश दिया। इसके बाद, 22.10.2019 दिनांकित आदेश के माध्यम से, शीघ्र सुनवाई आवेदन को अनुमति दी गई।

1.2 हमने दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्तागण को सुना और अभिलेखों की जांच की।

2. संक्षेप में, वर्तमान उद्देश्यों के लिए प्रासंगिक परिस्थितियाँ इस प्रकार हैं।

2.1 याचिकाकर्ता, जो भारतीय रेलवे कार्मिक सेवा (आई. आर. पी. एस.) का सदस्य है, ने मुख्य कार्मिक अधिकारी (सी. पी. ओ.) के रूप में तैनात रहते

हुए, सहायक कार्मिक अधिकारी (ए.पी.ओ.), सुश्री कुलजीत कौर को दिनांक 23.09.1996 पर निलंबित कर दिया और उसके खिलाफ कर्तव्यों में लापरवाही के लिए आरोप पत्र जारी किया।

2.2 इसके बाद, दिनांक 04.10.1996 पर, सुश्री कुलजीत कौर ने याचिकाकर्ता के खिलाफ रेल मंत्री के समक्ष यौन उत्पीड़न का आरोप लगाते हुए शिकायत दर्ज कराई। नतीजतन, याचिकाकर्ता को दिनांक 31.10.1996 पर सेवा से निलंबित कर दिया गया था और उसे आरोप के चार मर्दों पर आरोप पत्र जारी किया गया था, जिसमें बड़े दंड का प्रस्ताव था। जाँच अधिकारी ने अपनी रिपोर्ट में कहा कि याचिकाकर्ता के खिलाफ यौन उत्पीड़न के आरोप साबित नहीं हुए हैं।

2.3 पूरे अभिलेख की जांच करने के बाद, अनुशासनिक प्राधिकारी ने दिनांक 13.01.2000 पर एक आदेश पारित किया जिसमें कहा गया था कि आरोप संख्या 4 का मद आंशिक रूप से इस हद तक स्थापित था कि याचिकाकर्ता में नेतृत्व गुणों की कमी पाई गई थी; और उक्त मूल्यांकन के आधार पर, याचिकाकर्ता पर संचयी प्रभाव के बिना छह महीने के लिए वेतन में एक चरण की कमी का मामूली दंड लगाया गया था।

2.4 याचिकाकर्ता ने अपीलीय प्राधिकरण के समक्ष दिनांक 22.02.2000 पर एक वैधानिक अपील दायर की। चूंकि अपील लंबे समय तक लंबित रही, इसलिए याचिकाकर्ता ने केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण, प्रधान पीठ, नई दिल्ली के समक्ष मूल आवेदन सं. 22/2001 दायर किया।

2.5 मूल आवेदन सं. 22/2001 की विचाराधीनता रहने के दौरान, नोटिस जारी होने के बाद, अपीलीय प्राधिकरण ने दिनांक 26.12.2022 पर याचिकाकर्ता को सेवा से हटाने का बड़ा हुआ दंड लगाया।

2.6 उक्त बढ़ी हुई सजा को याचिकाकर्ता द्वारा विद्वत अधिकरण के समक्ष चुनौती दी गई थी, लेकिन उसका मूल आवेदन खारिज कर दिया गया था, इसलिए उसने इस न्यायालय के समक्ष रिट याचिका संख्या 4014/2005 दायर की।

2.7 दिनांक 04.12.2008 के निर्णय के माध्यम से, याचिकाकर्ता की उक्त रिट याचिका को अनुमति दी गई, जिससे उपरोक्त दोनों दंडों को रद्द कर दिया गया और याचिकाकर्ता को सभी परिणामी लाभ प्रदान करने का निर्देश दिया गया।

2.8 प्रत्यर्थीगण द्वारा दायर विशेष अनुमति याचिका को सिविल अपील सं 1752/2010 में परिवर्तित कर दिया गया था और इसे सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 27.09.2011 पर खारिज कर दिया गया था।

2.9 इस बीच, इस न्यायालय के दिनांक 04.12.2008 के निर्णय के संदर्भ में परिणामी लाभ नहीं दिए जाने पर, याचिकाकर्ता ने एक अवमानना याचिका (सि) सं. 317/2009 दायर की, जिसका अंत में इस न्यायालय द्वारा इस टिप्पणी के साथ निपटान किया गया कि यह जांच करना अवमानना कार्यवाही के दायरे में नहीं था कि क्या ब्याज को परिणामी लाभों के एक हिस्से के रूप में माना जा सकता है; हालाँकि, इस न्यायालय ने याचिकाकर्ता को यह स्वतंत्रता प्रदान की कि वह कानून के अनुसार अनुमत उपचारों का लाभ उठाकर अपनी शिकायतों, यदि कोई हों, का निवारण कर सकता है।

2.10 इसके बाद, याचिकाकर्ता ने मूल आवेदन सं. 653/2015 दायर किया जिसे इस रिट याचिका में आक्षेपित आदेश के माध्यम से खारिज कर दिया गया था।

3. अंतिम दलीलों के दौरान, याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने उपरोक्त अभिलेख का वर्णन किया और तर्क दिया कि आक्षेपित आदेश कानून

की नजर में रक्षणीय नहीं है। याचिकाकर्ता के लिए विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा यह तर्क दिया गया था कि **एस.के. दुआ बनाम हरियाणा राज्य, (2008)**

3 एस.सी.सी. 44 के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा नहीं करने का विद्वान अधिकरण का विचार कानूनी रूप से सही नहीं था। विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने हमें यह दिखाने के लिए भी अभिलेखों का वर्णन किया कि याचिकाकर्ता को न केवल अपीलीय प्राधिकरण द्वारा लगाए गए दंड से बल्कि अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा लगाए गए दंड से भी दोषमुक्त किया गया था, और इसे तकनीकी आधार पर दोषमुक्ति नहीं माना जा सकता है। याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने यह भी तर्क दिया कि विद्वत अधिकरण द्वारा आक्षेपित आदेश में लागू किया गया पूर्व-न्याय का सिद्धांत वर्तमान प्रकृति के मामलों में लागू नहीं होता है।

4. दूसरी ओर, प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने आक्षेपित आदेश का समर्थन किया और तर्क दिया कि वर्तमान याचिका गुणागुण रहित है। प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने आक्षेपित आदेश में दिए गए तर्क को दोहराया और इस बात पर जोर दिया कि **एस. के. दुआ** (पूर्वोक्त) के मामले में निर्णय वर्तमान मामले में काम नहीं करेगा क्योंकि उक्त मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने मामले को प्रतिप्रेषित किया था। प्रत्यर्थीगण की ओर से यह भी तर्क दिया गया कि चूंकि इस न्यायालय ने पहले की कार्यवाही में स्पष्ट रूप

से कहा था कि ब्याज प्रदान करने का कोई सवाल ही नहीं है, इसलिए यह राय अपने आप में इस मुद्दे पर पूर्व-न्याय का कार्य करेगी; और यह कि अवमानना याचिका को खारिज करते हुए, इस न्यायालय ने याचिकाकर्ता को ब्याज का दावा करने के लिए नई कार्यवाही शुरू करने की स्वतंत्रता नहीं दी, इसलिए मूल आवेदन सं. 653/2015 रक्षणीय नहीं था। अपनी दलीलों के समर्थन में, प्रत्यर्थागण के विद्वान अधिवक्ता ने दिनांक 02.12.2023 पर निर्णीत **श्रीमती रंजीत कौर बनाम जम्मू-कश्मीर राज्य व अन्य** सी.एफ.ए. सं. 5/2019 के मामले में जम्मू-कश्मीर एवं लद्दाख उच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया।

5. उपरोक्त प्रतिद्वंद्वी पृष्ठभूमि में, आक्षेपित आदेश के प्रासंगिक भाग को उद्धृत करना उचित होगा, जो इस प्रकार है :-

“19. उपरोक्त से जो निष्कर्ष निकाला जा सकता है वह इस प्रकार है :-

- (i) माननीय उच्च न्यायालय ने पहले ही अभिनिर्धारित किया है कि ब्याज का सवाल नहीं उठता है और परिणामी लाभों में ब्याज शामिल नहीं है।*
- (ii) एस. के. दुआ (पूर्वोक्त) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय इस मामले में प्रासंगिक नहीं है।*
- (iii) आवेदक को योग्यता के आधार पर दोषमुक्त नहीं किया गया था, बल्कि तकनीकी आधार पर छोड़ दिया गया था।*

20. उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, मूल आवेदन को

गुणागुण रहित पाया जाता है और तदनुसार खारिज किया जाता है। कोई जुर्माना नहीं।”

वहाँ से, इस मामले में शामिल पूरा मुद्दा तीन पहलुओं के इर्द-गिर्द घूमता है, अर्थात् क्या याचिकाकर्ता को तकनीकी आधार पर छोड़ दिया गया था ताकि उसे सेवानिवृत्ति बकाया पर ब्याज से वंचित किया जा सके; क्या ऊपर उद्धृत माननीय सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय वर्तमान उद्देश्यों के लिए प्रासंगिक नहीं होगा; और क्या याचिकाकर्ता का सेवानिवृत्ति बकाया पर ब्याज का दावा पूर्व-न्याय द्वारा बाधित है।

6. शुरुआत के लिए प्रथम पहलू को लेते हैं कि क्या याचिकाकर्ता को तकनीकी आधार पर दोषमुक्त किया गया था, इस न्यायालय की एक समन्वय पीठ ने रिट याचिका (सिविल) 4014/2005 (जिसके निर्णय को माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने सिविल अपील सं 1752/2010 में दिनांक 27.09.2011 के विस्तृत आदेश में बरकरार रखा था) में इस प्रकार अभिनिर्धारित किया :-

“5. लगाए गए आरोपों से यह स्पष्ट है कि चौथे आरोप का आधार याचिकाकर्ता द्वारा कथित रूप से की गई यौन चेष्टा है। लेकिन चूंकि उसके खिलाफ यौन उत्पीड़न से संबंधित कोई भी आरोप साबित नहीं हुआ था, इसलिए हमें ऐसा लगता है कि यह आरोप आवश्यक रूप से अमान्य है कि याचिकाकर्ता ने अपनी निजी सचिव के खिलाफ उसे वश में लाना और अधिक आसान बनाने के उद्देश्य से तुच्छ आधार पर अनुशासनात्मक कार्रवाई

शुरू की थी ताकि वह उसके सामने आत्मसमर्पण कर दे।

6. हमें यह भी प्रतीत होता है कि रेलवे बोर्ड ने इस कठिनाई की विवेचना की और इसलिए उसने आरोप के चौथे मद को तीन भागों में विभाजित किया : याचिकाकर्ता द्वारा की गई कथित यौन चेष्टा, तुच्छ आधार पर निजी सचिव का निलंबन और याचिकाकर्ता का उसे वश में लाना और अधिक आसान बनाने का गुप्त उद्देश्य ताकि वह उसके सामने आत्मसमर्पण कर दे। रेलवे बोर्ड ने माना कि आरोप के पहले और तीसरे भाग साबित नहीं हुए थे, लेकिन यह माना कि दूसरा भाग, यानी निजी सचिव का निलंबन तुच्छ आधार पर साबित हुआ था। इस आधार पर, रेलवे बोर्ड ने माना कि चौथा आरोप याचिकाकर्ता के खिलाफ आंशिक रूप से साबित हुआ था। रेलवे बोर्ड ने माना कि याचिकाकर्ता ने एक कथित जानबूझकर की गई चूक के लिए अपेक्षा से अधिक प्रतिक्रिया व्यक्त की, जिसके परिणामस्वरूप निजी सचिव को आरोप पत्र जारी किया गया। रेलवे बोर्ड ने स्पष्ट रूप से अभिनिर्धारित किया कि यह निष्कर्ष निकालना संभव नहीं था कि याचिकाकर्ता द्वारा अनुशासनात्मक कार्रवाई शुरू करने का उद्देश्य निजी सचिव को वश में करना और अधिक आसान बनाना और उसे उसके कथित यौन प्रस्तावों के आगे झुकाना था।

12. जैसा कि हमने ऊपर उल्लेख किया है, चौथे आरोप को पढ़ने पर, यह बिल्कुल स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता के निजी सचिव को निलंबित करने का कथित कारण यह था कि उसने उसकी कथित यौन चेष्टा को अस्वीकार कर दिया था। हालाँकि, यह साबित नहीं हुआ कि याचिकाकर्ता ने कोई यौन चेष्टा की थी। इसलिए, याचिकाकर्ता के निजी सचिव को निलंबित करने का कारण उसके खिलाफ साबित नहीं हुआ। नतीजतन, याचिकाकर्ता के खिलाफ चौथा आरोप हटा दिया जाना चाहिए था। लेकिन ऐसे कारणों से

जो स्पष्ट नहीं हैं (और जिन पर हमें चर्चा करने की आवश्यकता नहीं है) रेलवे बोर्ड ने चौथे आरोप को विभाजित किया और निष्कर्ष निकाला कि निजी सचिव का निलंबन और उसे आरोप पत्र जारी करना एक तुच्छ मामले और एक स्वतंत्र आरोप के संदर्भ में था और उस हद तक याचिकाकर्ता के खिलाफ चौथा आरोप साबित हो गया था।

19. इन सभी तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, हमारी राय में, यह बिल्कुल स्पष्ट है कि अपीलीय प्राधिकरण ने रेलवे बोर्ड द्वारा दिए गए तथ्यात्मक निष्कर्षों को उलट कर और उसके बाद याचिकाकर्ता को दी गई सजा को बढ़ा कर कानूनी रूप से गलत मार्ग अपनाया है। इस कारण से, अपीलीय प्राधिकरण के निर्णय को बरकरार रखते हुए अधिकरण द्वारा पारित आदेश को दरकिनार करने की आवश्यकता है।

20. इस तरह की स्थिति में, आम तौर पर, हमें मामले को उसके सही परिप्रेक्ष्य में पुनर्विचार के लिए अपीलीय प्राधिकरण को भेजना पड़ता। लेकिन, हमें बताया गया है कि याचिकाकर्ता उसके बाद सेवानिवृत्त हो चुका है और उसे उस पर मूल रूप से रेलवे बोर्ड द्वारा लगाया गया मौद्रिक दंड भी भुगतना पड़ा है। इसलिए, हम इस मुद्दे पर पुनर्विचार के लिए मामले को प्रत्यर्थागण को वापस भेजना उचित नहीं समझते हैं। यह मामला लगभग 12 साल पुराना है और इसे शांत तरीके से निपटाया जाना चाहिए।

21. रिट याचिका को अनुमति प्रदान की जाती है, लेकिन जुर्माने के विषय में कोई आदेश नहीं होगा। हालाँकि, याचिकाकर्ता सभी परिणामी लाभों का हकदार होगा।”

इस न्यायालय के निर्णय के उपरोक्त उद्धरण को देखते हुए, जिसे माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने बरकरार रखा था, हमारे पास इस तर्क को स्वीकार करने का कोई कारण नहीं है कि याचिकाकर्ता को दोषमुक्त किया जाना केवल तकनीकी आधार पर था।

7. **एस.के. दुआ** (पूर्वोक्त) के मामले में पूर्व-न्याय के तर्क पर आते हुए, माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष स्थिति यह थी कि उसमें अपीलार्थी पर, उनकी सेवानिवृत्ति से कुछ दिन पहले, तीन आरोप पत्र तामील किए गए थे और सेवानिवृत्ति के बाद उसे अस्थायी पेंशन का भुगतान किया गया था, जिसमें पेंशन के संराशीकृत मूल्य, छुट्टी नकदीकरण, ग्रेच्युटी आदि सहित उनके अन्य सेवानिवृत्ति बकाया को रोककर रखा गया था, जो कुल मिलाकर लगभग रु. 12,00,000/- था; यह कि उक्त सेवानिवृत्ति बकाया को अनुशासनात्मक कार्यवाही को अंतिम रूप मिलने तक रोक दिया गया था और उसके समापन के बाद उसे उसकी सेवानिवृत्ति की तारीख से चार साल की देरी के साथ इनका भुगतान किया गया था। उच्चतम न्यायालय ने इस प्रकार अभिनिर्धारित किया :-

“13. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्तागण को सुनने के बाद, हमारी राय में, अपील को आंशिक रूप से अनुमति दी जानी चाहिए। यह पक्षकारों द्वारा और उनके बीच विवाद में नहीं है कि अपीलार्थी दिनांक 30-6-1998 को सेवा से सेवानिवृत्त हुआ। यह भी निर्विवाद है कि सेवा से सेवानिवृत्ति के समय, अपीलार्थी ने

सरकारी सेवा में तीन दशक से अधिक समय पूरा कर लिया था। जाहिर है, इसलिए, वह कानून के अनुसार सेवानिवृत्ति लाभों का हकदार था। यह सच है कि उसके खिलाफ कुछ आरोप पत्र/कारण दर्शाओ नोटिस जारी किए गए थे और अपीलार्थी को कारण दिखाने के लिए बुलाया गया था कि उसके खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही क्यों शुरू नहीं की जानी चाहिए। हालाँकि, यह अपीलार्थी का मामला है कि वे सभी कार्यवाहियाँ श्री कुरैशी के कहने पर की गई थी, जिनके खिलाफ अपीलार्थी द्वारा अनाचार और कदाचार के गंभीर आरोप लगाए गए थे, जिसके परिणामस्वरूप श्री कुरैशी को सचिव, सिंचाई के पद से हटा दिया गया था। उक्त श्री कुरैशी फिर मुख्यमंत्री के प्रधान सचिव बन गए। इसके तुरंत बाद अपीलार्थी को आरोप पत्र जारी किए गए और उसके खिलाफ कार्यवाही शुरू की गई। तथ्य यह है कि कार्यवाही को अंततः हटा दिया गया था और सभी सेवानिवृत्ति लाभ अपीलार्थी को दिए गए थे। लेकिन इस बात से भी इनकार नहीं किया जा सकता है कि वे लाभ अपीलार्थी को चार साल बाद दिए गए थे।

14. इन परिस्थितियों में, प्रथमदृष्टया हमारा विचार है कि अपीलार्थी द्वारा उठाई गई शिकायत अच्छी तरह से स्थापित प्रतीत होती है कि वह ऐसे लाभों पर ब्याज का हकदार होगा। यदि इस क्षेत्र में वैधानिक नियम हैं, तो अपीलार्थी ऐसे नियमों के आधार पर ब्याज के भुगतान का दावा कर सकता है। यदि इस उद्देश्य के लिए प्रशासनिक निर्देश, दिशानिर्देश या मानदंड निर्धारित किए गए हैं, तो अपीलार्थी उस आधार पर ब्याज के लाभ का दावा कर सकता है। लेकिन वैधानिक नियमों, प्रशासनिक निर्देशों या दिशानिर्देशों की अनुपस्थिति में भी, एक कर्मचारी संविधान के अनुच्छेद 14, 19 और 21 पर भरोसा करते हुए संविधान के भाग III के तहत ब्याज का दावा कर सकता है। अपीलार्थी के लिए विद्वान अधिवक्ता का यह निवेदन

कि सेवानिवृत्ति लाभ "बाउंटी" की प्रकृति में नहीं हैं, हमारी राय में, अच्छी तरह से स्थापित है और इसके समर्थन में किसी प्राधिकार की आवश्यकता नहीं है। मामले के उस दृष्टिकोण में, हमारी सुविचारित राय में, उच्च न्यायालय द्वारा प्रत्यर्थागण को नोटिस जारी किए बिना ही याचिका को सीमित रूप से खारिज किया जाना सही नहीं था।"

(जोर दिया गया)

हम आक्षेपित आदेश के पैराग्राफ 18 में विद्वत अधिकरण के दृष्टिकोण को स्वीकार करने में असमर्थ हैं कि **एस.के. दुआ** (पूर्वोक्त) का मामला वर्तमान मामले में पूर्व-न्याय के रूप में काम नहीं करेगा क्योंकि उसमें मामला उच्च न्यायालय को भेज दिया गया था, यह स्पष्ट करते हुए कि सर्वोच्च न्यायालय की टिप्पणियां प्रथमदृष्टया टिप्पणियां थीं। उपरोक्त उद्धरण स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की शिकायत को अच्छी तरह से स्थापित माना है, भले ही प्रथमदृष्टया तौर पर। पूर्व-न्याय के सिद्धांत को देखते हुए शीर्ष न्यायालय के निर्णय में इस तरह की विस्तृत चर्चा को अस्वीकार करना कानूनी रूप से उचित नहीं होगा।

8. अंतिम तर्क, अर्थात् पूर्व-न्याय के सिद्धांत पर आते हुए, इस न्यायालय द्वारा अवमानना याचिका सं. 317/2009 में पारित दिनांक 11.12.2014 के आदेश का हिस्सा, जिस पर प्रत्यर्थागण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा भरोसा किया गया है, नीचे उद्धृत किया गया है :-

“6. मैं इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि यह एक अवमानना याचिका है, याचिकाकर्ता की इस दलील से प्रभावित नहीं हूँ कि वह ग्रेच्युटी या विलंबित भुगतान पर ब्याज का हकदार है। यहां तक कि याचिकाकर्ता को देय राशि की मात्रा पर भी अवमानना याचिका में निर्णय लेने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। किसी पक्ष के खिलाफ अवमानना की कार्रवाई तभी शुरू की जानी चाहिए जब अवज्ञा हो और यह अवज्ञा अपमानजनक, उद्दंड और जानबूझकर की गई होनी चाहिए।

7. याचिकाकर्ता को परिणामी राहत देने वाले आदेश में, परिणामी लाभों के माध्यम से याचिकाकर्ता को देय ग्रेच्युटी पर या बकाया राशि पर ब्याज के भुगतान का कोई उल्लेख नहीं है। इसलिए, यह न्यायालय याचिकाकर्ता को किसी भी गणना पर ब्याज का लाभ देने के लिए आक्षेपित आदेश के दायरे को बढ़ा नहीं सकता है।

8. इसी तरह, उसी सादृश्य के आधार पर, भले ही याचिकाकर्ता उसे किए गए भुगतान की मात्रा पर विवाद कर रहा हो, उसका अवमानना याचिका में एक सूक्ष्म विश्लेषण नहीं किया जा सकता है। याचिकाकर्ता कानून के अनुसार इन सभी गणनाओं पर उपचार की मांग करने के लिए स्वतंत्र है यदि उसकी शिकायतें अभी भी बनी हुई हैं।”

(जोर दिया गया)

हम खुद को यह समझाने में असमर्थ हैं कि उपरोक्त उद्धरण का उपयोग वर्तमान मामले में पूर्व-न्याय के सिद्धांत को लागू करने के लिए किया जा सकता है।

8.1 सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 11 में निर्धारित पूर्व-न्याय का सिद्धांत ऐसे मामले में लागू होता है जहां वाद में शामिल तथ्य का मामला इन्हीं पक्षकारों के बीच पिछले वाद में सीधे तौर पर या मूलतः विवाद का मामला था। शाब्दिक रूप से, लैटिन अभिव्यक्ति *रेस जुडिकाटा* (पूर्व-न्याय) का अर्थ है पहले से ही निर्णीत मामला। सिद्धांत यह है कि एक मामला जो पहले ही न्यायिक कार्यवाही में अंतिम रूप से तय हो चुका है, उसे फिर से उठाने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। पूर्व-न्याय के प्रवर्तन के लिए जो महत्वपूर्ण है वह यह है कि बाद के विषय वाद में शामिल मामला उन्हीं पक्षों या उनके उत्तराधिकारियों के बीच पिछले वाद में सीधे तौर पर या मूलतः विवादित होना चाहिए।

8.2 वर्तमान मामले में, जैसा कि स्पष्ट है, याचिकाकर्ता के सेवानिवृत्ति बकाया पर ब्याज के अधिकार के संबंध में मामला अवमानना कार्यवाही में न तो सीधे तौर पर और न ही मूलतः विवादित था। अवमानना कार्यवाही में शामिल मुद्दा प्रत्यर्थीगण द्वारा परिणामी लाभों, अर्थात् ग्रेच्युटी, छुट्टी नकदीकरण आदि के अनुदान का निर्देश देने वाले आदेश का अनुपालन था। चाहे याचिकाकर्ता सेवानिवृत्ति देय राशि या परिणामी लाभों पर ब्याज का हकदार है या नहीं, यह अवमानना कार्यवाही के दायरे में नहीं था, यही कारण

है कि विद्वान न्यायालय ने दिनांक 11.12.2014 के आदेश में ग्रेच्युटी पर या विलंबित भुगतान पर ब्याज का हकदार होने के संबंध में याचिकाकर्ता की प्रस्तुतियों को स्पष्ट रूप अस्वीकार किया।

8.3 ऊपर उद्धृत दिनांक 11.12.2014 के आदेश के उद्धरण को देखते हुए, हमें इसमें कोई संदेह नहीं है कि याचिकाकर्ता की सेवानिवृत्ति बकाया पर ब्याज की पात्रता पर निर्णय नहीं लिया गया था, न ही अवमानना कार्यवाही में इसका निर्णय लिया जा सका और इसके परिणामस्वरूप, वर्तमान मामले में पूर्व-न्याय का सिद्धांत लागू नहीं होगा।

8.4 जहाँ तक **श्रीमती रंजीत कौर** (पूर्वोक्त) के मामले में जम्मू-कश्मीर और लद्दाख उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश के निर्णय का संबंध है, जिस पर प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा भरोसा किया गया है, हम तथ्यों पर इसे वर्तमान मामले से पूरी तरह से अलग पाते हैं, इस सीमा तक कि उक्त मामले में, परिणामी लाभों पर ब्याज देने के मुद्दे पर अपील न्यायालय द्वारा लेटर पेटेंट अपील का निर्णय लेते समय स्पष्ट रूप से निर्णय लिया गया था, जिस के द्वारा उसमें अपीलार्थी को 9% प्रति वर्ष की दर से ब्याज का हकदार ठहराया गया था, जिस निर्देश को माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा केवल उस अवधि जिसके लिए ब्याज देय था तक संशोधित

किया गया था। इसलिए, उक्त मामले में निर्णय लेने के लिए कुछ भी शेष नहीं रहा और परिणामस्वरूप, उसी वाद हेतुक पर बाद के वाद को पूर्व-न्याय के सिद्धांत द्वारा बाधित माना गया। इसके विपरीत, वर्तमान मामले में, याचिकाकर्ता के सेवानिवृत्ति बकाया पर ब्याज के मुद्दे पर निर्णय नहीं लिया गया क्योंकि अवमानना न्यायालय ने स्पष्ट रुख अपनाया कि ऐसा न्यायनिर्णयन उसके दायरे से बाहर होगा।

9. इस बात को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है कि अगर याचिकाकर्ता को विभागीय कार्यवाही का सामना नहीं करना पड़ता, जो अंततः विफल रही, तो उसे निश्चित रूप से उसकी सेवानिवृत्ति के दिन सारी सेवानिवृत्ति देय राशि दी जाती। यह केवल उक्त विफल विभागीय कार्यवाई के कारण है कि याचिकाकर्ता के सेवानिवृत्ति बकाया में देरी हुई। एक बार जब इस न्यायालय ने याचिकाकर्ता को सभी परिणामी लाभों के भुगतान का निर्देश दिया, जिसे माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने भी बरकरार रखा था, तो प्रत्यर्थीगण को याचिकाकर्ता को मुकदमेबाजी के आगे के दौर से गुजरने के लिए मजबूर करने के बजाय न केवल सेवानिवृत्ति बकाया, बल्कि उस पर ब्याज का भी उचित दर पर भुगतान करना चाहिए था। राज्य होने के नाते, यह प्रत्यर्थीगण का बाध्य कर्तव्य था कि वे न्यायसंगत रूप से कार्य करते ताकि याचिकाकर्ता के साथ-साथ सरकारी खजाने पर भी इस वाद के बोझ से

बचा जा सकता।

10. चूंकि ऐसे मामलों में दी जाने वाली ब्याज दर के संबंध में हमारे समक्ष कोई स्पष्ट विधायी उद्घोषणा प्रस्तुत नहीं की गई है, इसलिए इस मामले के समग्र तथ्यों और परिस्थितियों के साथ-साथ देश की वर्तमान आर्थिक स्थितियों को देखते हुए, वर्तमान मामले में, न्यायहित में, 6% प्रति वर्ष की दर याचिकाकर्ता को उसकी सेवानिवृत्ति की तारीख से लेकर उसके वास्तविक भुगतान की तारीख तक की अवधि के लिए देय ब्याज की उचित और तर्कसंगत दर होगी।

11. उपरोक्त चर्चा को देखते हुए, हम आक्षेपित आदेश को बरकरार रखने में असमर्थ हैं, इसलिए इसे दरकिनार किया जाता है और प्रत्यर्थीगण को याचिकाकर्ता को उसकी सेवानिवृत्ति की तारीख से वास्तविक भुगतान की तारीख तक की अवधि के लिए 6% प्रति वर्ष की दर से सभी सेवानिवृत्ति बकाया पर ब्याज का भुगतान करने का निर्देश देते हुए, अपील को अनुमति प्रदान की जाती है। इसके अलावा, प्रत्यर्थीगण याचिकाकर्ता को वाद की लागत के प्रति रु. 25,000/- की राशि का भी भुगतान करेंगे, जो संयत रूप से अनुमानित है। उक्त राशि का भुगतान इस निर्णय की तारीख से चार सप्ताह के भीतर याचिकाकर्ता को कर दिया जाए।

गिरीश कठपालिया
(न्यायाधीश)

सुरेश कुमार कैत
(न्यायाधीश)

26 जुलाई, 2024
एस/आरवाई

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।